साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

वार्षिक शुल्क रु. 30/-
आजीवन शुल्क रु. 500/-

बुद्धवर्ष 2559, मार्गशीर्ष पूर्णिमा, 25 दिसंबर, 2015 वर्ष 45 अंक 7

For online **Patrika** in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx

धम्मवाणी

वस्सिका विय पुप्फानि, मद्दवानि पमुञ्चति।
एवं रागञ्च दोसञ्च, विप्पमुञ्चेथ भिक्खवो॥
-- धम्मपद ३७७, भिक्खुवग्गो.

-- (जैसे) जूही (अपने) कुम्हलाये हुए फूलों को छोड़ देती है, वैसे ही हे भिक्षुओ (साधको)! (तुम) राग और द्वेष को छोड़ दो।

धर्म क्या है?

*(पूज्य गुरुदेव श्री सत्यनारायण गोयन्काजी द्वारा प. महाराष्ट्र के विख्यात शहर नासिक के **'रमाबाई आंबेडकर गर्ल्स हाई स्कूल'** के प्रांगण में सन १९९८ में दिये गये तीन दिवसीय प्रवचन-शृंखला के पहले प्रवचन का पहला भाग)*

नासिक की धर्म नगरी के धर्म प्रेमी सज्जनो, सन्नारियो!

नासिक का यह क्षेत्र आज से नहीं, सदियों से, हजारों वर्षों से भारत का एक महान आध्यात्मिक क्षेत्र रहा है। इसने महाराष्ट्र की ही नहीं, अध्यात्म के क्षेत्र में सारे भारत की नासिका ऊंची की है, शायद इसीलिए इसका नाम नासिक पड़ा हो। दूर-दूर से लोग यहां आ करके धर्म धारण करने की विधियों का अभ्यास करते रहे। आज से लगभग १८०० वर्ष पूर्व के भारत में यहां से पैठन तक, गोदावरी नदी का यह तटवर्ती क्षेत्र उन दिनों का पवित्र स्थान कहलाता था। यहां तपोभूमियां हुआ करती थीं, लोग तपते थे। एक परंपरा के लोग तपते थे, दूसरी परंपरा के लोग यज्ञ-याज्ञ करते थे। यहां विभिन्न प्रकार के धार्मिक अनुष्ठान होते रहे। तत्पश्चात जैसे सारे भारत में, वैसे यहां भी भक्ति मार्ग का एक बहुत बड़ा सैलाव आया और लोग उसमें रंग गये। वह अब तक चलता रहा, चल ही रहा है। अब एक बार फिर तपश्चर्या का, 'विपश्यना' का युग जागा है और यहां के लोग उसे स्वीकार कर रहे हैं। क्यों स्वीकार कर रहे हैं? क्योंकि यहां के लोग अध्यात्म प्रेमी हैं।

पिछले दिनों मुंबई महानगरी में एक विशाल 'विश्व विपश्यना पगोडा' का शिलान्यास हुआ तब किसी एक सम्मानित अतिथि ने पूछ लिया कि आप बर्मा से यह कल्याणकारी विद्या लेकर आये तो इसका प्रधान केंद्र यहीं क्यों चुना? भारत के किसी अन्य स्थान से आरंभ क्यों नहीं किया? मैं क्या कहता, मैंने नहीं चुना भाई, इस धर्म की धरती ने मुझे चुन लिया और यहीं से काम आरंभ हो गया।

यहां के लोगों में अध्यात्म के प्रति प्रेम है, लोग समझते हैं। अगर ठीक से समझाया जाय तो धर्म को खूब समझने लगते हैं और उसे धारण करने के काम में लग जाते हैं। धारण करें तो ही धर्म है। धारण नहीं करें और वह केवल वाणी-विलास, बुद्धि-विलास का विषय बन कर जाय तो उससे जो लाभ मिलना चाहिए, उस लाभ से वंचित रह जाते हैं। आओ, आज की इस धर्म सभा में पहले तो यह समझें कि **धर्म क्या है?** और फिर यह समझें कि हम **धर्म क्यों धारण करें?** और फिर यह भी समझें कि **धर्म धारण करें तो कैसे धारण करें?** इन तीन दिनों की व्याख्यान माला में इन्हीं विषयों का प्रतिपादन किया जायगा। तो आज समझें - धर्म क्या है?

सारे भारत का बहुत बड़ा दुर्भाग्य रहा कि पिछले १५०० वर्ष या यूं कहें दो हजार वर्षों से धर्म शब्द का जो सही रूप था, सही अर्थ था, उसे खो बैठे। धर्म का सही अर्थ ही नहीं मालूम होगा तो उसे धारण कैसे करेंगे? अब तो धर्म शब्द के साथ बैसाखियां लग गयीं। मानो धर्म को कोई सहारा चाहिये। इस समुदाय का अलग धर्म, इस समुदाय का अलग धर्म, तो किसी को कहा बौद्ध धर्म, किसी को हिंदू धर्म, जैन धर्म, सिख धर्म, ईसाई धर्म इत्यादि।

धर्म को बैसाखी की जरूरत नहीं होती। धर्म को किसी अन्य के सहारे की जरूरत नहीं होती। धर्म तो स्वयं हमें सहारा देने वाला है, उसको किस सहारे की जरूरत है? लेकिन जब नासमझी से धर्म शब्द के साथ ये बैसाखियां(crutches) जोड़ दी जाती हैं तो बैसाखियां प्रमुख हो जाती हैं, धर्म बेचारा गौण हो जाता है। धर्म नेपथ्य में, अंधेरे में चला जाता है। दुर्भाग्य से यही होने लगा।

पुरातन भारत में धर्म कहते थे– धारण करे सो धर्म। **धारेती'ति धम्मं**। क्या धारण करे? हमारा चित्त जिस किसी चित्त वृत्ति को धारण करेगा, उस समय वह उस चित्त का धर्म है। अपना स्वभाव धारण करता है। अपना लक्षण धारण करता है। जो चित्त वृत्ति मैंने अपने चित्त पर इस समय धारण की उसका स्वभाव क्या है? यानी, धर्म का दूसरा अर्थ- स्वभाव, प्रकृति, निसर्ग, ऋत; बहुत पुराना अर्थ था। 'स्वभाव' आज भी कभी-कभी इसी अर्थ में प्रयोग में आ जाता है, जब हम कहते हैं कि अग्नि का धर्म है जलना और जलाना माने इसका स्वभाव है। अगर वह जलती नहीं और उसकी लपेट में जो आ जाय उसे जलाती नहीं तो वह अग्नि नहीं, कुछ और है। ऐसे ही कह सकते हैं बर्फ का स्वभाव है शीतल होना और शीतल करना। अगर वह स्वयं शीतल नहीं होती और उसके समीप जो आये उसको शीतल नहीं करती तो बर्फ नहीं, कुछ और है।

आज भी कभी-कभी कहते हैं कि सारे प्राणी मरणधर्मा हैं, व्याधिधर्मा हैं, जराधर्मा हैं- यह स्वभाव है। इस अर्थ में धर्म का जब प्रयोग किया जाता है तब धर्म समझ में आने लगता है। मैंने अपने चित्त में जो चित्त वृत्ति धारण की, उसका कैसा धर्म। मैंने अपने चित्त में मैल जगाया, क्रोध, द्वेष, दुर्भावना, ईर्ष्या, अहंकार कोई भी विकार जगाया, इनका क्या स्वभाव है? हमारे देश के मुनियों, ऋषियों, महापुरुषों, सद्गुरुओं, अरंहतो, बुद्धों ने, सम्बुद्धों ने यही खोज की कि इस समय चित्त में जो जागा, उसका क्या स्वभाव है!

क्रोध, द्वेष, दुर्भावना, ईर्ष्या, अहंकार कोई भी विकार जागे, बहुत जलन पैदा होती है। बहुत व्याकुलता पैदा करता है। यह स्वभाव है उसका। मुझे क्रोध भी आये और भीतर व्याकुलता नहीं हो तो वह क्रोध नहीं है, कुछ और है। क्रोध, द्वेष, दुर्भावना आदि जागी है तो व्याकुलता उसके साथ-साथ आयेगी ही। इसे सहजात कहा, यानी, यह दुःख एक साथ जन्मता है।

जिस पात्र में हमने जलते हुए अंगारे रखे, वे पहले उस पात्र को जलाते हैं, तपाते हैं और फिर आसपास के वातावरण को

संतापित करने लगते हैं। जो भी उस वातावरण में आयगा वही तपन महसूस करेगा। ऐसे ही जिस पात्र में बर्फ रखें, उसका पहला काम या स्वभाव है पहले उस पात्र को शीतलता प्रदान करेगी और फिर आसपास के वातावरण में शीतलता विस्तारित करेगी। यह स्वभाव है।

हमारे देश के ऋषियों, मुनियों ने यह बात देख ली कि जब-जब मनुष्य अपनी नासमझी में, नासमझी ही है भाई, कोई समझ करके अपने आप को क्यों जलायेगा? कोई समझता हुआ अपने को क्यों व्याकुल करेगा? नासमझ है इसलिए अपने मानस में क्रोध, द्वेष, ईर्ष्या, अहंकार या अन्य कोई विकार जगाया तो जलने लगा। क्योंकि हमने अपने पात्र में जलते हुए अंगारे डाल दिये और अंगारों का तो यही स्वभाव है। यदि उन अंगारों को दूर करें तो जलन अपने आप कम हो जायगी। उसकी जगह यदि उसमें बर्फ रखें, क्या बर्फ रखें? मैत्री, करुणा, सद्भावना जैसी चित्त वृत्तियां डालें तो देखेंगे भीतर ही भीतर इतनी शांति, इतनी शीतलता! क्योंकि वह उसका स्वभाव है।

सभी सद्वृत्तियों का यही स्वभाव है कि वे हमें भीतर बहुत शांति प्रदान करेंगी, बहुत शीतलता प्रदान करेंगी और फिर आसपास के सारे वातावरण में शांति और शीतलता भर देंगी।

जब आदमी क्रोध जगाता है तब उस क्रोध का पहला शिकार वह स्वयं होता है। औरों को तो पीछे व्याकुल करेगा, पहले खुद व्याकुल हो जायगा और फिर व्याकुलता बिखरने लगेगी। जब मैं क्रोध जगाऊं तो उस समय मेरे संपर्क में जो आये, वही बेचारा व्याकुल हो जायगा। सारे वातावरण को तनाव से भर दूंगा। मैंने जो चित्तवृत्ति जगाई है उसका यह स्वभाव है, धर्म है, वह अपना धर्म प्रकट करेगी। क्योंकि ऐसी चित्तवृत्ति जगायी है जो व्याकुलता पैदा करने वाली है। मेरे लिए भी व्याकुलता, औरों के लिए भी व्याकुलता। यह होश जाग जाय तो जानबूझ कर कौन अपने आप को व्याकुल करेगा?

एक नन्हा-सा बच्चा, जो अबोध है, उसे अभी होश नहीं है। अपनी नासमझी में वह जलते हुए अंगारों पर हाथ रख देता है, हाथ जलता है तो हाथ पीछे खींचता है, इतना तो जान गया कि इससे हाथ जलता है, हाथ पीछे खींचता है। कभी नासमझी में फिर हाथ रख दिया, फिर जला, फिर हाथ पीछे कर लिया। एक बार हुआ, दो बार हुआ, पांच बार हुआ, दस बार हुआ, अब वह समझ गया, ये अंगारे हैं, इनको नहीं छूना चाहिये। यह आग है इसे नहीं छूना चाहिये।

एक नन्हा-सा बच्चा भी समझ जाता है और हमारी नासमझी देखो! अंगारे भरे जा रहे हैं भीतर, अपने को जलाये जा रहे हैं, स्वयं जल रहे हैं, औरों को जला रहे हैं लेकिन इससे छुटकारा पाने की कोशिश नहीं करते। इसलिए नहीं करते कि जब हमारे भीतर क्रोध, द्वेष, दुर्भावना, अहंकार, ईर्ष्या या कोई भी विकार जागता है तब उस समय जिस व्यक्ति पर, जिस घटना पर जागा, हमारे मानस में वही धूमता रहता है। किसी पर मुझे क्रोध आया क्योंकि उसने मेरा अपमान किया। कोई ऐसा काम किया जो मेरे लिए अनचाहा है, या मेरे मनचाहें काम में कोई बाधा पैदा कर दी तो मुझे क्रोध आया। तब मैं कहूंगा- स्वाभाविक है, क्रोध तो आयगा ही, और क्या होगा?

अरे, क्या स्वाभाविक है भाई! तू करने क्या लगा? तू क्रोध तो उस पर पैदा कर रहा है, जिसने तेरे काम में कोई अड़चन पैदा की, तेरी इच्छाओं की पूर्ति होने में कोई बाधा पैदा की, और जला रहा है अपने आप को। क्योंकि देख नहीं पाये कि क्रोध जगाया तो मेरे भीतर क्या होने लगा? यह देखना ही भूल गये। जब किसी दूसरे व्यक्ति पर, दूसरी घटना या स्थिति पर क्रोध जगाया, तब बार-बार मन उसी पर जाता है। उसने मेरा इतना अपमान किया, ऐसा कहा, यह बात ऐसी हो गयी...। मानस बहिर्मुखी है, बाहर की सच्चाई की ओर वह झुका हुआ है। मेरे भीतर क्या होने लगा, यह देखना ही बंद कर दिया।

भारत में इस देखने की विद्या को विपश्यना कहते थे। यह बहुत प्राचीन, बहुत पुरानी विद्या है- अपने आप को देखना है। अपने भीतर क्या हो रहा है, वह ज्यादा जरूरी है। बाहर क्या हो रहा है, इससे हम अनजान नहीं रहेंगे, उसको भी जानना है; पर उससे ज्यादा जरूरी यह जानना है कि अमुक घटना घटने से, अमुक व्यक्ति या अमुक स्थिति के संपर्क में आने से, मेरे भीतर क्या होने लगा?

जिस दिन अच्छी तरह से यह देखना आ जाता है तब धर्म समझ में आने लगता है। वह धर्म जिसके साथ कोई बैसाखियां नहीं लगीं। शुद्ध धर्म समझ में आने लगता है। अरे भाई, स्वभाव है न, मैंने मन को विकारों से विकृत किया तो इन विकारों का स्वभाव है-- व्याकुल ही बनायेंगे। और देखने लगा तो एक बार देखेगा, दो बार देखेगा, दस बार देखेगा। बाद में हर घटना से काट करके अपने भीतर देखने लगेगा। अभी तो कहता है कि बाहर जो घटना घटी इसकी वजह से मेरे मन में क्रोध, द्वेष, दुर्भावना या जो भी विकार जागा, उसका आलंबन बाहर का है। उसे एक बार दूर करके देखें- मेरे भीतर क्या होने लगा? मैंने जो यह क्रोध की प्रतिक्रिया की, तब क्या होने लगा? अरे, जलने लगा न! बड़ा व्याकुल होने लगा रे! ऐसा एक बार, दो बार, दस बार देखेगा, स्वभाव पलटना शुरू हो जायगा। तो धर्म धारण करने लगा। अब वह समझ गया कि धर्म क्या है? हम विकारों से विकृत न हों, यह धर्म है। ऐसे ही हम विकारों के बजाय अपने मानस में सद्गुण पैदा करें, मन में मैत्री, करुणा, सद्भावना जगायें तब देखेंगे भीतर इतना सुख, इतनी शांति, इतनी शीतलता! बाहर के किसी व्यक्ति पर करुणा, मैत्री जगायी या किसी समूह पर सद्भावना जगायी, अरे, इतना सुख, इतनी शांति, इतनी शीतलता!

अब अनुभव से जानने लगा तब धर्म सही माने में धर्म हो गया। **धारेती'ति धम्मं**। अब धारण कर रहा है। समझ रहा है- अग्नि को धारण करूंगा तो जलूंगा ही। दुनिया की कोई शक्ति मुझे नहीं बचा सकती और बर्फ धारण करूंगा तो शीतल होऊंगा ही, दुनिया की कोई बाधा उसमें व्यवधान नहीं डाल सकती। प्रकृति का नियम है। यही ऋत, यही विश्व का विधान, कुदरत का कानून है जो सब पर लागू होता है। अपने को चाहे जिस नाम से पुकारे, कोई फर्क नहीं पड़ता। कोई भी आदमी जलते हुए अंगारों पर हाथ रखे तो अंगारे इस बात को नहीं देखते कि यह आदमी अपने को हिंदू कहता है कि बौद्ध ..., उससे कोई लेन-देन नहीं। अग्नि का स्वभाव है, वह जलायेगी ही। बर्फ पर हाथ रखा तो शीतल करेगी ही। जिस दिन धर्म का यह सार्वजनीन स्वरूप प्रकट होने लगता है, उस दिन बहुत बड़ा लोक कल्याण होना शुरू हो जाता है। और इसे भूल कर बाहर-बाहर के आलंबनों को महत्त्व देना शुरू कर दिया, तब अपने आप को सुधारने का काम बंद कर दिया। धर्म से दूर जाने लगे।

ऊपर-ऊपर से यह भ्रम होता है कि मैं बहुत धार्मिक हूं, लेकिन जब होश जागे तब देखेगा कि कहां धार्मिक हूं। मैं तो जब देखो तब विकार जगाता हूं। मुझे धर्म का जरा-सा ज्ञान नहीं, मुझे धर्म का जरा-सा होश नहीं, मैं धर्म धारण नहीं करता। मैं अपने मन को मैला करते रहता हूं, व्याकुल होते रहता हूं तथा औरों को व्याकुल करते रहता हूं। तब मैं धार्मिक कैसे हुआ? अब सोचेगा, क्योंकि धर्म की सही बात समझ में आने लगी।

हर समाज की अपनी-अपनी परंपरायें चली आ रही हैं। लोग अपने-अपने तीज-त्योहार मनाते हैं, व्रत-उपवास करते हैं, कर्म-कांड करते हैं, पर्व-त्योहार मनाते हैं, मनाएं। अपनी-अपनी वेश-भूषा, दार्शनिक मान्यता.., ये सब अलग-अलग हैं। इसीलिए अलग-अलग समाज हैं, अलग-अलग सम्प्रदाय हैं, समूह हैं, समुदाय हैं, कोई बुरी बात नहीं। परंतु समझें कि इनसे धर्म का कोई लेन-देन नहीं। ये सब तो सामाजिक आमोद-प्रमोद के लिए हैं, करने चाहिये, लेकिन धर्म के साथ इसे जोड़ देंगे तो धर्म से दूर होते चले जायेंगे।

एक ही मापदंड-- मेरे मन के विकार दूर हुए कि नहीं, तब सही रास्ते पर आ गया। अब चाहे जिस समाज, सम्प्रदाय, समुदाय का व्यक्ति हो, उसने धर्म के सार्वजनीन स्वरूप को समझ लिया। और जो धर्म का सार्वजनीन स्वरूप है वही धर्म का सही स्वरूप है। वह प्रमुख हो जाय तो बड़ा लोक कल्याण होने लगा। अब हर व्यक्ति अपने आप को हिंदू, बौद्ध, जैन, ईसाई कहे अथवा ब्राह्मण या शूद्र कहे कोई फर्क नहीं पड़ता। हर व्यक्ति, हर अवस्था में, हर स्थिति में अपने भीतर देखे– इस समय मेरे चित्त की क्या अवस्था है। इस समय मैंने अपने चित्त में क्या जगाया, और जो जगाया उसका क्या प्रभाव पड़ रहा है? तब आदमी सही माने में स्वार्थी बन जाता है। धर्म जब सही धर्म होता है तब हमें स्वार्थी बनाता है। समझने लगता है कि हमारा सही स्वार्थ किस बात में है। यह नहीं समझते तो जहां-जहां आदमी किसी स्वार्थ के काम में लगता है तब स्वार्थ के नाम पर यही देखता है कि इससे मेरा काम सिद्ध होता है कि नहीं? मैं भले किसी को धोखा ही दूं, मेरा काम सिद्ध हो गया! तब आदमी सही माने में स्वार्थी नहीं है। वह अपने स्वार्थ की हानि कर रहा है। क्योंकि ऐसा करते हुए वह अपने मन में विकार जगा रहा है। विकार जगा रहा है तो अपने स्वार्थ की हानि कर रहा है। अपने आप को कष्ट दे रहा है। अपने आप को जला रहा है। तो धर्म समझ में नहीं आया।

धर्म समझ में आ जाय तब और सारी बातें, सारे काम करते हुए भी, प्रमुखता इस बात को देंगे कि धर्म का अन्य बातों से कोई लेन-देन नहीं। धर्म का एक ही मापदंड है कि मेरे चित्त की क्या अवस्था है। मेरे चित्त में अगर सद्गुण जागे हैं तब मैं सचमुच धर्मवान हूं। उतनी देर के लिए धर्मवान हूं, जितनी देर सद्गुण जागे हैं, मैत्री जागी है, करुणा जागी है, सद्भावना जागी है-- मैं सचमुच धर्मवान हूं। और जितनी देर तक दुर्भावना जागी है, दुर्गुण जागे हैं, उतनी देर तक बड़ा अधार्मिक हूं रे, मैं बड़ा अधार्मिक हूं। यह होश जागने लगे तब अधर्म से दूर होगा और धर्म की ओर प्रगति होगी।

यह बुद्धि के स्तर पर समझ कर रह जाने से समझ में नहीं आता। इसीलिए भारत के महापुरुषों ने अपने भीतर देखना सिखाया। सच्चाई को अपने भीतर देखो। भीतर की सच्चाई नहीं देखी तो बाहर की दुनिया की सारी सच्चाई देख कर भी अनदेखा ही रह गया, अनजान ही रह गया। कुछ पल्ले नहीं पड़ा, और अपने भीतर की सच्चाई देखने लगा तो जैसे सब कुछ मिल गया, अरे अनमोल रत्न मिल गया। जीवन जीने की एक कला मिल गयी। कैसे सुखपूर्वक, शांतिपूर्वक जीयें। और जीना सब चाहते हैं सुख-शांति में। कोई एक व्यक्ति नहीं मिलेगा दुनिया में जो कहे कि मुझे सुख-शांति नहीं चाहिये, मैं दुःख का ही जीवन जीना चाहता हूं। कौन कहेगा?

कौन कहेगा मैं अपने आप को इस आग में जलाना चाहता हूं? नहीं कहेगा, नहीं चाहता, फिर भी करता वही है। करता वही है जो उसे जला रहा है, व्याकुल कर रहा है। करता वही है जो उसे दुःखी बना रहा है, और साथ-साथ औरों को दुःखी बना रहा है। जब अपने भीतर देखने लगेगा तब बात समझ में आयगी- अरे, मुझे जीना नहीं आया। मुझे जीने की कला नहीं आयी। यह भी कोई जीना हुआ कि जब देखो तब अपने-आप को व्याकुल बनाता हूं, औरों को व्याकुल बनाता हूं। लोगों को तथा अपने आप को व्याकुल बनाने का ही काम करता हूं। अरे, मेरे पास बांटने को है क्या? क्योंकि मैंने अनचाहे, अनजाने विकारों का ढेर इकट्ठा कर लिया। व्याकुलता ही व्याकुलता इकट्ठी कर ली। मैं व्याकुल होता हूं, औरों को व्याकुलता ही बांटता हूं।

जिस दिन यह होश जाग जायगा, और सच मानो यह होश प्रवचनों से नहीं जागेगा। प्रवचनों का असर धर्म सभा तक ही है। इसके बाहर जाओगे, बिल्कुल वैसे के वैसे हो, जैसी पुरानी आदत डाल ली है। जब देखो तब अनचाही बात हुई कि क्रोध जगाया, द्वेष जगाया; मनचाही बात नहीं हुई कि क्रोध जगाया, द्वेष जगाया, दुर्भावना जगायी। वह हालत वैसी की वैसी रहेगी। उसे पलटने के लिए क्या करें? उसे पलटने के लिए एक तरीका जो चला कि जब मन में कोई विकार जागता है तब उसे किसी और तरफ लगा लो। जिस बात को लेकर मेरे मन में क्रोध आया, अब मेरा मन उसमें न लगा कर किसी और बात में लगे। अरे, किसी भी बात में लगाओ भाई! एक गिलास पानी पीना शुरू कर दो, तो मन पानी पीने में लग गया। देखोगे क्रोध थोड़ा शांत हुआ। या और कहीं लगाओ– एक, दो, तीन, चार...; गिनती गिनने लगो, मन को गिनती में लगा दिया। वह कठिन होता है तो जिस किसी देवी, देवता, ईश्वर, ब्रह्म, सद्गुरु, संत में बहुत श्रद्धा है, उसका नाम लेना शुरू कर दो। बार-बार उसका नाम लोगे तो मन उस तरफ लग गया। हम उस विकार से मुक्त होने लगे।

पर भाई, अपने यहां के जो ऋषि थे – 'ऋषि' शब्द का अर्थ ही होता है कि वह व्यक्ति जो ऋत की ऐषणा करता है, गवेषणा करता है, पर्यवेषणा करता है, अन्वेषणा करता है, माने खोज करता है। ऋत क्या है? विश्व का विधान क्या है? कुदरत का कानून क्या है? इसकी खोज केवल बुद्धि के स्तर पर नहीं, अपने भीतर करता है। यह विधान, कुदरत का कानून क्या चाहता है? एकदम समझ में आने लगता है। यह कुदरत का कानून, यह विधान, यह ऋत चाहती है कि तू अपने मन को मैला मत कर। जैसे ही मैला करेगा, मैं दंड दूंगी, तुरंत दंड दूंगी, देर नहीं होती। जैसे ही मैला न करके सद्गुणों से भरा, तो तुरंत पुरस्कार मिलेगा, देर नहीं होती। तुरंत पुरस्कार मिलेगा।

जिस किसी देश में रहते हो, उसके कानून हमें मानने चाहिये। हम law abiding citizens हों, अगर हम कानून तोड़ते हैं तो दंड मिलेगा। फिर भी किसी ने राज्य का कानून तोड़ दिया तो दंड मिलने में न जाने कितना समय लगे। अदालती कार्यवाही में दंड से बच भी सकते हो। लेकिन प्रकृति के विधान में, ऋत में, कुदरत के कानून में ऐसा नहीं होता। देर भी नहीं लगती और गलती भी नहीं होती। मैंने कानून तोड़ा, यानी, धर्म का उल्लंघन किया तो तुरंत दंड मिलेगा। जैसे ही मन में विकार जगाया, देर नहीं लगती, तुरंत व्याकुल हो जायगा, दोनों एक साथ जागते हैं। विकार जागा कि उसके साथ-साथ व्याकुलता जागी। पुरानी भाषा में इसे सहजात कहते थे, दोनों एक साथ जन्मते हैं। देर नहीं होती, उसके लिए किसी अदालत में भी जाने की जरूरत नहीं। प्रकृति का दंड तुरंत मिलता है, यह प्रकृति का विधान है। इसी प्रकार मैंने अपने चित्त को निर्मल किया, उसमें सद्भावना जगायी, तुरंत पुरस्कार मिलता है। अभी शांति मिलने लगी। अभी सुख मिलने लगा। यह बात जितनी जल्दी अनुभूतियों से समझ में आने लगे, उतनी जल्दी मानस का स्वभाव पलटने लगता है। ... (*क्रमशः*)...

विपश्यना विशोधन विन्यास, पगोडा परिसर, मुंबई के वर्ष २०१६ के शैक्षणिक कार्यक्रम

• **१.** पालि भाषा को रोमन, देवनागरी एवं सिंहली लिपियों में लिखने की **प्रशिक्षण कार्यशाला**-- दि. २० से २७ अप्रेल, २०१६ तक। • **२.** छः सप्ताह का पालि-हिंदी आवासीय सघन प्रशिक्षण कार्यक्रम-- दि. ४ मई से १५ जून तक।

• **३.** बारह सप्ताह का पालि-अंग्रेजी आवासीय सघन प्रशिक्षण कार्यक्रम-- दि. ६ जुलाई से ५ अक्टूबर तक। • **४.** पालि-अंग्रेजी अनुवाद कार्यशाला -- ७ से १२ अक्टूबर तक। ➥ इन सब के लिए आवश्यक योग्यता और फार्म प्राप्त करने के लिए कृपया निम्न वेबसाइट देखें--

http://www.vridhamma.org/Theory-And-Practice-Courses/

या अधिक जानकारी के लिए कृपया **संपर्क** करें-- वि.वि.वि. कार्यालय- ०२२-३३७४७५६०, २) श्रीमती बलजीत लाम्बा - ०९८३३५१८९७, ३) कु. राजश्री - ०९००४६९८६४८, ४) श्रीमती अल्का वेंगुर्लेकर : ९८२०५८३४४०.

धम्मपुण्ण, पुणे में बालशिविर-शिक्षक कार्यशाला

२० जनवरी सायं ५ बजे से २३ जनवरी सायं ५ बजे तक. **संपर्क**-- धम्मपुण्ण कार्यालय,
Registration by Email: info@punna.dhamma.org

Registered No. NSK/235/2015-2017

WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2015-2017

अतिरिक्त उत्तरदायित्त्व

१. श्री आर.आर. पंडित, धम्मपाल, भोपाल के केंद्र-आचार्य की सहायता सेवा
२. श्री ए. एल. राजभट्ट, धम्मपाल, भोपाल के केंद्र-आचार्य की सहायता सेवा
३. Mr. L. H. Chandrasena, धम्मकूट, श्रीलंका के केंद्र-आचार्य के रूप में सेवा
४. Mr. Nanda Wijewardana, धम्मकूट, श्रीलंका के केंद्र-आचार्य की सहायता सेवा

नये उत्तरदायित्त्व
बालशिविर-शिक्षक

१. श्रीमती चैताली बागची, शांतिनिकेतन
२. श्री मंजुल भाक्री, गुड़गांव
३. श्री जगदीश चंद्र गुप्ता, जयपुर
4. Mr. Fred Jacquemin, France
5. Miss Praew Kosee, Thailand
6. Miss Wanwisa Chunkhampha, Thailand
7. Mr. Ben Sidebottom, Australia
8. Ms. Lin Kuoy, Australia.

मंगल मृत्यु

▶ विपश्यनाचार्य श्री शेरसिंह जैन ७-८-१५ को ८३ वर्ष की पकी उम्र में जयपुर में अत्यंत शांति और समता के साथ दिवंगत हुए। १९८६ में वे पुत्र-वियोग से व्यथित होकर विपश्यना से जुड़े और इसी के होकर रह गये। १९९३ में विपश्यना के सहायक आचार्य नियुक्त हुए और धर्मसेवा करते हुए पूर्ण आचार्य बन कर धम्मथली केंद्र की सेवा के साथ-साथ भारत तथा विदेशों में अनेक शिविरों में लोगों की धर्मसेवा करके धन्य हुए। उन्होंने 'धम्मथली संदेश' नामक पत्रिका का कुशल संचालन और संपादन करके लोगों को धर्म की महत्त्वपूर्ण जानकारियों से अवगत कराया। धर्मपुरुष श्री शेरसिंह के धर्ममय आचरण से हम सब को प्रेरणा प्राप्त हो, यही मंगल कामना है।

▶ मुंबई की सुरेखा कोंडीबा शिंदे ने अत्यल्प आयु में ही धर्म में खूब प्रगति की और २०१३ में विपश्यना की सहायक आचार्या बन कर अनेकों की सेवा की। ६० दिवसीय शिविर में सम्मिलित थी परंतु ३० दिन बाद मैत्री लेकर स्वास्थ्य-परीक्षण हेतु मुंबई जाना पड़ा। ६ दिन तक अस्पताल में भरती रही और फिर वहीं २०-११-१५ को शांतिपूर्वक शरीर छोड़ दिया। इसके पूर्व भी उसने ६० दिवसीय शिविर किये थे और अनेकों में सेवा भी दी थी। उसका मनुष्य जीवन सफल हुआ। धम्म परिवार की मंगल कामना।

आचार्य स्वयं-शिविर संपन्न

२९ नवंबर को धम्म पत्तन, मुंबई में पूज्य माताजी का स्वयं शिविर तथा इसी समय अन्य केंद्रों पर लगे स्वयं शिविर भी प्रभूत धर्मलाभ के साथ सफलतापूर्वक संपन्न हुए। शिविर के अंत में वियतनामी साधकों का एक समूह पगोडा परिसर में उनसे मिल कर बहुत प्रसन्न हुआ।

(आचार्य निवास के बाहर पूज्य माताजी सभी साधकों को मंगल मैत्री देती हुई) ➥

वर्ष २०१६ के सभी चार एक-दिवसीय महाशिविर

रविवार, १७ जनवरी - सयाजी ऊ बा खिन के प्रति कृतज्ञता (*१९ जन.*), **रविवार, २२ मई** - बुद्ध पूर्णिमा, **रविवार, १७ जुलाई** - गुरु पूर्णिमा, **रविवार, २ अक्टूबर** - पू. गुरुजी श्री गोयन्काजी के प्रति कृतज्ञता (*२९ सितंबर*) एवं शरद पूर्णिमा -- के उपलक्ष्य में **'ग्लोबल विपश्यना पगोडा'** में पूज्य माताजी के सान्निध्य में एक दिवसीय महाशिविर होंगे। **शिविर-समयः** प्रातः **11** बजे से अपराह्न **4** बजे तक। 3 बजे के प्रवचन में बिना साधना किये लोग भी बैठ सकते हैं। बुकिंग के लिए कृपया निम्न फोन नंबरों या ईमेल से शीघ्र संपर्क करें। कृपया बिना बुकिंग कराये न आयें और **समग्गानं तपोसुखो**- सामूहिक तप-सुख का लाभ उठाएं। **संपर्कः** 022-28451170 022-337475-01/43/44- Extn. 9, (**फोन बुकिंग : 11** से **5** बजे तक, प्रतिदिन) **Online Regn.: www.oneday.globalpagoda.org**

दोहे धर्म के

कुदरत का कानून है, सब पर लागू होय।
मैले मन व्याकुल रहे, निर्मल सुखिया होय॥

कुदरत लेवे पक्ष ना, करे न कभी लिहाज।
उसको वैसा फल मिले, जिसका जैसा काज॥

जब-जब मन मैला करे, कुदरत देवे दंड।
आकुल-व्याकुल हो उठे, रहे न शांति अखंड॥

पुरस्कार तत्क्षण मिले, जब मन निर्मल होय।
यही नियम है धरम का, पक्षपात ना होय॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा०) लिमिटेड

८, मोहता भवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोन: 2493 8893, फैक्स: 2493 6166
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

मन तो मेलो ही रवै, पड़ग्यो इसो सुभाव।
निरमळ करणो होय तो, धरम गंग मँह न्हाव॥

बै घड़ियां संताप री, मैलै मन बेचैन।
अ घड़ियां सुख सांति री, निरमळ मन दिन रैन॥

या कुदरत री रीत है, यो हि धरम रो सार।
निरविकार सुखियो रवै, ब्याकुल जग्यां विकार॥

काया कपड़ा धोण री, छोड़ सोध दुरबोध।
अपणै चित रै मैल नै, सोध सकै तो सोध॥

मोरया ट्रेडिंग कंपनी

सर्वो स्टॉकिस्ट - इंडियन ऑईल, ७४, सुरेशदादा जैन शॉपिंग कॉम्प्लेक्स, एन.एच.६, अजिंठा चौक, जलगांव - ४२५ ००३, फोन. नं. ०२५७-२२१०३७२, २२१२८७७
मोबा.०९४२३१८७३०१, Email: morolium_jal@yahoo.co.in
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी- 422 403, दूरभाष : (02553) 244086, 244076.
मुद्रण स्थान : अपोलो प्रिंटिंग प्रेस, जी-२५९, सीकॉफ लिमिटेड, ६९ एम. आय. डी. सी, सातपुर, नाशिक-422 007. **बुद्धवर्ष 2559, मार्गशीर्ष पूर्णिमा, 25 दिसंबर, 2015**

वार्षिक शुल्क रु. **30/-,** US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. **500/-,** US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71. Registered No. NSK/235/2015-2017**

WPP Postal Licence No. AR/Techno/WPP-05/2015-2017
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422 403,** Dist. Nashik (M.S.)

DATE OF PRINTING: 15 December 2015, DATE OF PUBLICATION: 25 December 2015

If not delivered please return to:-

विपश्यन विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - 422 403
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोन : (02553) 244076, 244086, 243712,
243238. **फैक्स :** (02553) 244176
Email: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org